[2020] 2 उम. नि. प. 102

राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम, प्रबंध निदेशक और एक अन्य

बनाम

रमेश कुमार शर्मा

[2011 की सिविल अपील सं. 7072 के साथ सिविल अपील सं. 7475, 7474, 7473, 7476]

16 जनवरी, 2020

न्यायमूर्ति संजय किशन कौल और न्यायमूर्ति के. एम. जोसेफ

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 133 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश VII का नियम 11 और औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2(ट), 2-क तथा स्थायी आदेश का विनियम 35] – प्रश्नगत मामला, औद्योगिक विवाद है या सिविल विवाद – मामले की प्रकृति और विहित सिद्धांत – जहां यह प्रश्न उद्भूत होता है कि कोई विवाद, औद्योगिक विवाद है या सिविल विवाद तो उक्त मामले का अवधारण उसकी प्रकृति और उसके निमित्त विहित सिद्धांतों के अनुसरण में ही किया जा सकता है अन्यथा नहीं ।

वर्तमान मामले का मुख्य तथ्य यह है कि एक सिविल वाद कर्मकारों द्वारा उनके ऊपर अपीलार्थी प्रबंधतंत्र द्वारा अधिरोपित जुर्माने को आक्षेपित करते हुए घोषणा और स्थायी व्यादेश के लिए फाइल किया गया था । प्रत्यर्थियों ने अन्य बातों के साथ यह अभिवाक् किया है कि यह जुर्माना स्थायी आदेश (जो गैर-कानूनी है) के विनियम 35 के उल्लंघन में अधिरोपित किया गया है जिसका प्रभाव यह है कि पक्षकारों के बीच संविदात्मक बाध्यताओं का अभिकथित तौर पर भंग हुआ है । अपीलार्थी ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश VII के नियम 11 के अधीन अभिवाक् उद्भूत करते हुए, वाद को टालने का प्रयास, यह दावा करते हुए किया कि वादपत्र नामंजूर किए जाने योग्य है और प्रत्यर्थी, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन उपचार पाने से वर्जित

है । इस अभिवाक् को विद्वान् सिविल न्यायाधीश, जयपुर सिटी ने नामंजूर कर दिया और तारीख 16 मई, 2006 के आदेश द्वारा आवेदन खारिज कर दिया । उसके विरुद्ध प्रस्तुत पुनरीक्षण आवेदन को उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 27 फरवरी, 2008 को खारिज कर दिया गया । इससे व्यथित होकर लगभग 12 वर्षों के पश्चात्, यह अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय के विवेक में यह ध्यान रखना चाहिए कि औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947, प्रक्रियात्मक विधियों के आधिक्य द्वारा कर्मकारों को फायदे के लिए त्वरित, सस्ता, औपचारिक और भारमुक्त वैकल्पिक विवाद समाधान की मशीनरी का उपबंध करता है । इस प्रकार, इसका उद्देश्य कर्मकारों को संरक्षण प्रदान करना है । यह भी मत व्यक्त किया गया है कि संविदा की साधारण विधि से उद्भूत विवाद अर्थात् जहां अनुतोषों का दावा संविदा के साधारण विधि के आधार पर किया जाता है, सिविल न्यायालय में फाइल वाद को कायम रखे जाने योग्य नहीं कहा जा सकता है, यद्यपि, ऐसा विवाद, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2(ट) या धारा 2-क के अर्थांतर्गत 'औद्योगिक विवाद' भी गठित कर सकता है । यह मात्र तब होता है जब विवाद में, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 द्वारा सृजित, मान्यता, अनुपालन या उसके प्रवर्तन या बाध्यताएं अंतर्वलित होती हैं, मात्र तभी उपचार अनन्य रूप से औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के उपबंधों के अधीन आएगा । इस मामले के तथ्यों में कर्मकार की सेवा समाप्ति अंतर्वलित है और इस प्रकार, उपचार, अन्य बातों के साथ औद्योगिक विवाद अधिनियम के अंतर्गत भी आता है । वर्तमान मामले में, कतिपय जुर्माने की रकम वसूली अंतर्वलित है जिसे औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2-क के अंतर्गत होना नहीं कहा जा सकता है । कर्मकार अपनी बुद्धिमत्ता (या संभाव्यत: इसके अभाव में) से सिविल न्यायालय के समक्ष गया और अपने दावों को गुणागुणों पर कोई न्यायनिर्णयन हुए बिना पिछले 15 वर्षों से बिना कोई ध्यान दिए छोड़ रखा है । हम, यह भी उल्लेख कर सकते हैं कि आक्षेपित आदेश भी अंतर्वर्ती आदेशों की प्रकृति में है । इस प्रकार, न्यायालय का यह मत है कि आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं बनता है

और परिणामत:, अपील खारिज की जाती है । समयावधि व्यपगत होने को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय सिविल न्यायाधीश को यह निर्देश देते हैं कि वे 2005 के सिविल वाद सं. 774 के विचारण की कार्रवाई तुरंत आरंभ करें और विचारण पूरा करने और निर्णय सुनाने का प्रयास करे, यदि आदेश की प्राप्ति की तारीख से छह माह की अधिकतम अवधि में पहले ही उद्घोषित नहीं कर दिया गया है । (पैरा 8, 9, 10, 11 और 12)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[1976] (1976) 1 एस. सी. सी. 496 :
प्रीमियर ऑटोमोबाइल्स लि. बनाम
कमलेकर शांताराम वाडके, बाम्बे और अन्य ; 6

[1975] (1995) 5 एस. सी. सी. 75 :
राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम और एक अन्य
बनाम **कृष्ण कांत और अन्य** । 7

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2011 की सिविल अपील सं. 7072 के साथ सिविल अपील सं. 7475, 7474, 7473, 7476.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 133 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री एस. के. भट्टाचार्य, एल. के. पावनम, (सुश्री) सीमा शर्मा, नीरज बॉबी पावनम, (श्रीमती) तोमतीन्नगानबी कोइजम, अधिवक्तागण

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री बांके बिहारी शर्मा, यशपाल ढींगड़ा और परमानंद गौड़, अधिवक्तागण

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति संजय किशन कौल ने दिया ।

न्या. कौल – हमने अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल को सुना ।

2. प्रत्यर्थी/प्रत्यर्थियों की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ ।

3. यह सिविल वाद कर्मकारों द्वारा उनके ऊपर अपीलार्थी प्रबंधतंत्र द्वारा अधिरोपित जुर्माने को आक्षेपित करते हुए घोषणा और स्थायी व्यादेश के लिए फाइल किया गया था । प्रत्यर्थियों ने अन्य बातों के साथ यह अभिवाक् किया है कि यह जुर्माना स्थायी आदेश (जो गैर-कानूनी है) के विनियम 35 के उल्लंघन में अधिरोपित किया गया है जिसका प्रभाव यह है कि पक्षकारों के बीच संविदात्मक बाध्यताओं का अभिकथित तौर पर भंग हुआ है ।

4. अपीलार्थी ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश VII के नियम 11 के अधीन अभिवाक् उद्भूत करते हुए, वाद को टालने का प्रयास, यह दावा करते हुए किया कि वादपत्र नामंजूर किए जाने योग्य है और प्रत्यर्थी, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन उपचार पाने से वर्जित है । इस अभिवाक् को विद्वान् सिविल न्यायाधीश, जयपुर सिटी ने नामंजूर कर दिया और तारीख 16 मई, 2006 के आदेश द्वारा आवेदन खारिज कर दिया । उसके विरुद्ध प्रस्तुत पुनरीक्षण आवेदन को उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 27 फरवरी, 2008 को खारिज कर दिया गया । अतएव, 12 वर्षों के पश्चात्, हमें यह अवधारित करना है कि क्या दोनों निचले न्यायालयों का यह कार्य विधिमान्य था या नहीं ।

5. हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि मामले में मात्र नोटिस जारी किया गया था और कोई अंतरिम आदेश मंजूर नहीं किया गया था । तर्कसंगत रूप से यह कहा जा सकता है कि वाद का विचारण किया गया था और बीच में विनिश्चय हुआ था, यद्यपि, अपील पर उस अवधि में विचार नहीं किया गया था जो व्यपगत हो गया था । तथापि, हमें यह सूचित किया गया है कि वाद में कार्यवाही इस आधार पर नहीं की गई है कि मामला इस न्यायालय के समक्ष लंबित है । हमें यह दुखदायी तथ्य प्रतीत होता है कि न्याय का अवलंब, अनंतकाल की अवधि तक विलंब करने के लिए नहीं लिया जा सकता है ।

6. परीक्षा करने पर, हमारा यह निष्कर्ष है कि यह मामला **प्रीमियर**

ऑटोमोबाइल्स लि. बनाम **कमलेकर शांताराम वाडके, बाम्बे और अन्य**[1] वाले मामले में, सुस्थिर सिद्धांतों से शासित होता है अर्थात् जैसा कि पैरा 9 में निम्नलिखित सुस्थिर किया गया है :-

> "9. इस प्रकार यह प्रतीत होता है कि समुचित सरकार के हस्तक्षेप द्वारा निस्संदेह, प्रत्यक्ष तौर पर नहीं अपितु औद्योगिक विवादों के निपटारे और न्यायनिर्णयन के लिए अति व्यापक मशीनरी उपलब्ध कराई गई है । किन्तु, चूंकि एक औद्योगिक व्यथित व्यक्ति सरकार के हस्तक्षेप के बिना अपनी शिकायत के प्रतितोष के लिए प्रत्यक्ष तौर पर अधिकरण या श्रम न्यायालय में नहीं जा सकता है इसलिए, विधिसम्मत तौर पर यह मत अपनाया जाता है कि अधिनियम, 1947 के अधीन उपबंधित उपचार, औद्योगिक विवादों का विचारण करने के लिए सिविल न्यायालय की अधिकारिता को पूर्ण रूप से वंचित नहीं करता है । यदि विवाद, अधिनियम, 1947 की धारा 2(ट) या धारा 2-क के अर्थांतर्गत एक औद्योगिक विवाद नहीं है तो यह सुस्पष्ट है कि अधिनियम, 1947 के अधीन ऐसे विवादों का न्यायनिर्णयन करने के लिए कोई उपबंध नहीं है । सिविल न्यायालय समुचित फोरम होंगे । किन्तु जहां औद्योगिक विवाद, साधारण विधि या कॉमन विधि के अधीन किसी अधिकार, बाध्यता या दायित्व को प्रवर्तित करने के प्रयोजन के लिए है और न कि अधिनियम, 1947 के अधीन सृजित किसी अधिकार, बाध्यता या दायित्व के लिए है तो वैकल्पिक फोरम का चुनाव करना वाद करने वाले पर निर्भर करता है कि या तो वह अधिनियम, 1947 के अधीन अपने उपचार के लिए वाद फाइल करे या समुचित न्यायालय के समक्ष वाद फाइल करे । यह स्पष्ट है कि उसके पास दोनों अधिकार नहीं हैं । वह दोनों में एक या अन्य का चुनाव कर सकता है । किन्तु, हम वर्तमान तौर पर यह दर्शित करते हैं कि सिविल न्यायालय को औद्योगिक विवादों का विचारण और न्यायनिर्णयन करने के लिए कोई अधिकारिता नहीं होती है यदि यह अधिनियम, 1947 के अधीन सृजित मात्र कतिपय

---

[1] (1976) 1 एस. सी. सी. 496.

अधिकार या दायित्व के प्रवर्तन से संबंधित है । उस दशा में सिविल न्यायालय को अभिकथित संविदा भंग के कारण धमकी वाली क्षति को रोकने के लिए व्यादेश की डिक्री मंजूर करने की भी अधिकारिता नहीं होगी यदि संविदा ऐसी है जो अधिनियम, 1947 के अधीन एकमात्र मान्यताप्राप्त और प्रवर्तनीय है ।"

7. विद्वान् काउंसेल ने यह विवादित नहीं किया है कि पूर्वोक्त निर्णय में अपनाए गए मत को उलटा नहीं गया है अपितु यह निवेदन किया है कि अपीलार्थी के मामले में विधिक प्रास्थिति को **राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम और एक अन्य** बनाम **कृष्ण कांत और अन्य**[1] वाले मामले में निम्नलिखित रूप से स्पष्ट किया गया है :-

"35. अब हम उपर्युक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, निम्नलिखित प्ररूप में सिद्धांतों को संक्षिप्त कर सकते हैं -

(1) जहां संविदा के साधारण विधि से विवाद उद्भूत होता है अर्थात् जहां अनुतोषों का संविदा के साधारण विधि के आधार पर दावा किया जाता है वहां सिविल न्यायालय में फाइल वाद को कायम नहीं रखा जा सकता है, यद्यपि, ऐसा विवाद, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2(ट) या धारा 2-क के अर्थांतर्गत 'औद्योगिक विवाद' भी गठित कर सकता है ।

(2) तथापि, जहां विवाद में, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 द्वारा सृजित किन्हीं अधिकारों या बाध्यताओं में से किसी की मान्यता, अनुपालन या प्रवर्तन अंतर्वलित है वहां उपचार मात्र उक्त अधिनियम, 1947 द्वारा सृजित फोरम से ही प्राप्त हो सकता है ।

(3) इसी प्रकार, जहां विवादों में, अधिनियमितियों जैसे औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946 द्वारा सृजित अधिकारों और बाध्यताओं की मान्यता, अनुपालन या प्रवर्तन अंतर्वलित है - जिन्हें औद्योगिक विवाद

---

[1] (1995) 5 एस. सी. सी. 75.

अधिनियम, 1947 का 'सिस्टर अधिनियमितियां' कहा जा सकता है और जो ऐसे विवादों का समाधान करने के लिए किसी फोरम का उपबंध नहीं करता है वहां मात्र उपचार, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 द्वारा सृजित फोरमों से ही प्राप्त होता है परंतु उनसे औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2(ट) और धारा 2-क के अर्थांतर्गत औद्योगिक विवाद गठित होते हों अथवा जहां ऐसे अधिनियमिति में यह कहा गया हो कि ऐसे विवाद या तो औद्योगिक विवाद के रूप में समझे जाएंगे या यह कहा गया हो कि इसका न्यायनिर्णयन औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 द्वारा सृजित फोरमों में से किसी फोरम द्वारा किया जाएगा । अन्यथा, सिविल न्यायालय का अवलंब लेना खुला होता है ।

(4) यह कहना सही नहीं है कि औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 द्वारा उपबंधित उपचार, इस कारण से समान रूप से प्रभावी नहीं होते हैं कि ऐसे फोरमों में जाना समुचित सरकार द्वारा किए जाने वाले निर्देश पर निर्भर होता है । सरकार को प्रदत्त निर्देश करने की शक्ति का प्रयोग अधिनियमिति के उद्देश्य को प्रभावी बनाने के लिए किया जाता है और अतएव, यह गैर-मार्गदर्शित नहीं है । निस्संदेह, इस नियम के अधीन निर्देश तब नहीं किया जाता है जब उद्भूत विवाद प्रत्यक्षत: पूर्णतया तुच्छ होता है । प्रदत्त शक्ति, निर्देश करने की शक्ति होती है और न कि विनिश्चय करने की शक्ति होती है, यद्यपि, यह हो सकता है कि सरकार इस बात की परीक्षा करने की हकदार हो कि क्या विवाद, प्रत्यक्षत: तुच्छ है और न्यायनिर्णयन करने योग्य नहीं है ।

5. हम संसद और राज्य विधान-मंडलों को यह समादेश देते हैं कि वे पूर्वोक्त विधि की नीति से संगत रूप में, श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण के समक्ष प्रत्यक्ष तौर पर कर्मकारों को जाने के लिए समर्थ बनाने हेतु – अर्थात् राज्य सरकार द्वारा निर्देश की अपेक्षाओं के बिना उपबंध करे –

औद्योगिक विवादों की दशा में भी यद्यपि, वे अधिनियम, 1947 की धारा 2-क के अंतर्गत आते हों । यह औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 द्वारा उपबंधित उपचारों की प्रभावशीलता के संबंध में आशंका को भी समाप्त करने में कारगार साबित होगा ।

6. औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946 के अधीन और के अनुसरण में विरचित प्रमाणित स्थायी आदेश, कानूनी तौर पर सेवा की शर्तों को अधिरोपित करते हैं और नियोजकों तथा कर्मचारियों दोनों पर बाध्यकारी होते हैं, यद्यपि, वे 'कानूनी उपबंधों' की कोटि में नहीं आते हैं । इन स्थायी आदेशों का कोई उल्लंघन होने से कर्मचारी को या तो औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 द्वारा सृजित फोरमों के समक्ष अनुतोषों के लिए जाने का हक प्राप्त हो जाता है अथवा सिविल न्यायालय के समक्ष जाने का हक प्राप्त हो जाता है, जहां सिविल न्यायालय का अवलंब लिया जाता है जो इसमें उपदर्शित सिद्धांतों के अनुसरण में खुला होता है ।

7. औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 और इसके समान अधिनियमितियों से उद्भूत विधि की नीति से कर्मकारों के लिए वैकल्पिक विवाद्यक समाधान की मशीनरी का उपबंध होता है, यह ऐसी मशीनरी है जो त्वरित, सस्ता, औपचारिक और प्रक्रियात्मक विधियों के आधिक्य से और अपीलों दर अपीलों तथा सिविल न्यायालयों में लागू पुनरीक्षणों से भारमुक्त होता है । वास्तव में, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन न्यायालयों और अधिकरणों की शक्तियां इस आशय में अत्यधिक विस्तारित है कि वे ऐसे अनुतोष मंजूर कर सकते हैं जैसा कि वे औद्योगिक विवाद को रखने और उसका समाधान करने के लिए समुचित परिस्थितियों में सोचते हैं ।"

8. हमें विवेक में यह ध्यान रखना चाहिए कि औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947, प्रक्रियात्मक विधियों के आधिक्य द्वारा कर्मकारों को

फायदे के लिए त्वरित, सस्ता, औपचारिक और भारमुक्त वैकल्पिक विवाद समाधान की मशीनरी का उपबंध करता है । इस प्रकार, इसका उद्देश्य कर्मकारों को संरक्षण प्रदान करना है ।

9. यह भी मत व्यक्त किया गया है कि संविदा की साधारण विधि से उद्भूत विवाद अर्थात् जहां अनुतोषों का दावा संविदा के साधारण विधि के आधार पर किया जाता है, सिविल न्यायालय में फाइल वाद को कायम नहीं रखे जाने योग्य नहीं कहा जा सकता है, यद्यपि, ऐसा विवाद, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2(ट) या धारा 2-क के अर्थांतर्गत 'औद्योगिक विवाद' भी गठित कर सकता है । यह मात्र तब होता है जब विवाद में, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 द्वारा सृजित, मान्यता, अनुपालन या उसके प्रवर्तन या बाध्यताएं अंतर्वलित होती हैं, मात्र तभी उपचार अनन्य रूप से औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के उपबंधों के अधीन आएगा । इस मामले के तथ्यों में कर्मकार की सेवा समाप्ति अंतर्वलित है और इस प्रकार, उपचार, अन्य बातों के साथ औद्योगिक विवाद अधिनियम के अंतर्गत भी आता है ।

10. वर्तमान मामले में, कतिपय जुर्माने की रकम वसूली अंतर्वलित है जिसे औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2-क के अंतर्गत होना नहीं कहा जा सकता है । कर्मकार अपनी बुद्धिमत्ता (या संभाव्यत: इसके अभाव में) से सिविल न्यायालय के समक्ष गया और अपने दावों को गुणागुणों पर कोई न्यायनिर्णयन हुए बिना पिछले 15 वर्षों से बिना कोई ध्यान दिए छोड़ रखा है । हम, यह भी उल्लेख कर सकते हैं कि आक्षेपित आदेश भी अंतर्वर्ती आदेशों की प्रकृति में है ।

11. इस प्रकार, हमारा यह मत है कि आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं बनता है और परिणामत:, अपील खारिज की जाती है ।

12. समयावधि व्यपगत होने को ध्यान में रखते हुए, हम सिविल न्यायाधीश को यह निर्देश देते हैं कि वे 2005 के सिविल वाद सं. 774 के विचारण की कार्रवाई तुरंत आरंभ करें और विचारण पूरा करने और निर्णय सुनाने का प्रयास करे, यदि आदेश की प्राप्ति की तारीख से छह माह की अधिकतम अवधि में पहले ही उद्घोषित नहीं कर दिया गया है ।

13. पूर्वोक्त निबंधनों में अपील खारिज की जाती है ।

2011 की अपील सं. 7475, 2011 की सिविल अपील सं. 7474, 2011 की सिविल अपील सं. 7474 और 2011 की सिविल अपील सं. 7476.

2011 की सिविल अपील सं. 7472 में उपर्युक्त पारित आदेश को ध्यान में रखते हुए, अपीलें खारिज की जाती हैं ।

अपीलें खारिज की गईं ।

क.

[2020] 2 उम. नि. प. 111

नल्लापारेड्डी श्रीधर रेड्डी (डा.)

बनाम

आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य

[2019 की दांडिक अपील सं. 1934]

21 जनवरी, 2020

न्यायमूर्ति डी. वाई. चंद्रचूड़ और न्यायमूर्ति ऋषिकेश राय

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 216 – न्यायालय की आरोप में परिवर्तन या परिवर्धन करने की शक्ति – अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध आरोपों के लिए विचारण पूर्ण हो जाना – न्यायालय द्वारा निर्णय आरक्षित रखा जाना – निर्णय सुनाए जाने से पूर्व लोक अभियोजक द्वारा अभियुक्त के विरुद्ध अतिरिक्त आरोप जोड़ने के लिए आवेदन किया जाना – अभियुक्त के विरुद्ध अतिरिक्त आरोप जोड़ा जाना – जहां अभियुक्त के विरुद्ध अतिरिक्त आरोप जोड़ने के लिए प्रस्तुत की गई सामग्री और साक्ष्य से प्रथमदृष्टया मामला बनता है, तो न्यायालय निर्णय सुनाए जाने से पूर्व किसी भी प्रक्रम पर आरोपों में